आधी दुनिया की एक और सम्मानजनक जीत

मुंबई की सुप्रसिद्ध हाजी अली दरगाह में महिलाओं के प्रवेश का रास्ता साफ कर हाईकोर्ट ने ऐतिहासिक फैसला सुनाया है, जिसके दूरगामी परिणाम होंगे। यह मुस्लिम महिलाओं को न्याय दिलाने की तरफ एक बड़ा कदम तो है ही, साथ-ही-साथ नारी के सांविधानिक अधिकारों का हनन को रोकने का भी एक सराहनीय कदम है। यह नारी को रूढ़-धार्मिक संस्कारों एवं विडम्बनापूर्ण मानसिकता से मुक्ति दिलाने का भी सशक्त माध्यम बनकर प्रस्तुत होगा। दरगाह प्रबंधक से जुड़े लोग भी अगर इस फैसले को सकारात्मक रूप से लेने की कोशिश करेंगे, तो इससे धर्म और आधुनिक समाज के रिश्तों को बेहतर ढंग से समझने और दोनों के बीच बेहतर तालमेल बनाने में मदद मिलेगी।

यों इस फैसले में कुछ भी अप्रत्याशित नहीं है, क्योंकि अदालत का ताजा फैसला कुछ महीने पहले शनि शिंगणापुर मामले में दिए गए उसके फैसले से पूरी तरह मेल खाता है। हैरानी की बात तब होती, जब फैसला कुछ और आता।

मुंबई उच्च न्यायालय के ताजा आदेश ने हाजी अली दरगाह में स्त्रियों के प्रवेश पर चली आ रही पाबंदी को हटाते हुए पुरुष और महिला के बीच चले आ रहे धार्मिक भेदभाव को समाप्त कर दिया है। हाईकोर्ट ने कहा कि संविधान में पुरुष और महिला को बराबर का दर्जा दिया गया है। अगर पुरुष मजार तक जा सकते हैं तो महिलाओं को भी इसकी इजाजत दी जानी चाहिए। यह महिलाओं के संघर्ष की जीत तथा समानता के उनके अधिकार का एक और अहम फैसला है, जिससे नारी अस्मिता एवं अस्तित्व को एक नया मुकाम मिलेगा। शताब्दियों से असमानता एवं भेदभाव के कुहरे से आच्छन्न महिला-समाज को आगे लाना वर्तमान युग के बड़े स्वप्नों में से एक है। महिला-समाज के अतीत को हम देखते हैं तो हमें महसूस होता है कि उससे जुड़ी समाज की संकीर्ण मानसिकताओं में काफी बदलाव आया है, लेकिन बहुत सारे बदलाव होने बाकी है। बात महिलाओं की है, हम उन्हें हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई आदि में विभक्त करके नहीं देख सकते।

भारतीय मुस्लिम महिला आंदोलन से जुड़ी जाकिया सोमन और नूरजहां ने हाजी अली दरगाह में महिलाओं के प्रवेश पर प्रतिबंध को चुनौती देकर एक क्रांति का शंखनाद किया है। क्योंकि महिलाएं यदि प्रतीक्षा करती रहेंगी कि कोई अवतार आकर उन्हें जगाएगा तो समय उनके हाथ से निकल जायेगा और वे जहां खड़ी है, वही खड़ी रहेंगी।

यहां बात मुस्लिम महिलाओं को न्याय दिलाने की तरफ उठे एक बड़े कदम की ही नहीं है बल्कि यह

महिला संघर्ष की ऐतिहासिक जीत की भी है। क्योंकि शनि शिंगणापुर की तरह यह मामला भी परंपरा और आधुनिक मूल्यों के बीच टकराहट का एक बड़ा उदाहरण रहा है। प्रतिबंध के पक्ष में दलीलें भी उसी तरह की थीं। दरगाह न्यास के प्रबंधकों का कहना था कि पाबंदी इस्लाम के उसूलों के मुताबिक लगाई गई थी, जिसमें औरतों को किसी पुरुष संत की मजार पर जाने की इजाजत नहीं होती। न्यास का दूसरा तर्क यह था कि संविधान के अनुच्छेद छब्बीस के तहत धर्मस्थल के प्रबंधन का अधिकार दिया गया है। पर अदालत ने दोनों दलीलें खारिज कर दीं। हाजी अली दरगाह का मामला तो इसलिए भी दिलचस्प है कि वहां महिलाओं के प्रवेश पर पाबंदी पहले नहीं थी। महिलाओं को दरगाह के अंदर न जाने देने का फैसला कुछ ही समय पहले सन् 2012 में लिया गया था, और तभी से महिला-अधिकारों के लिए लड़ने वाले संगठन इसके खिलाफ मुहिम चला रहे थे। इस बात से इसी तथ्य की फिर पुष्टि होती है कि जिन धार्मिक स्थलों पर महिलाओं के प्रवेश पर पाबंदी है, वह परंपरागत रूप से हमेशा नहीं थी, यह बाद में किसी एक ऐतिहासिक दौर में कुछ शुद्धतावादी धार्मिक नेताओं का प्रभाव जब प्रबंधकों में बढ़ा होगा, तब लगाई गयी। हाजी अली दरगाह में महिलाओं के प्रवेश को महापाप माना गया तो भारतीय उपमहाद्वीप और इसके बाहर भी सर्वाधिक सम्मानित दरगाहों में शामिल अजमेर की ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह में तो महिलाओं के प्रवेश को महापाप नहीं माना जाता है और उसी परंपरा के ख्वाजा सलीम चिश्ती की फतेहपुर सीकरी स्थित दरगाह में भी महिलाएं बेरोकटोक जा सकती हैं। लेकिन इसी परंपरा के अन्य कई संतों की दरगाहों में महिलाओं के प्रवेश पर पाबंदी क्यों है ? क्यों किसी एक समय कोई परम्परा महापाप हो जाती है और किसी समय वह महापाप नहीं रहती ?

जैसे शनि शिंगणापुर में भले कुछ महीने पहले तक महिलाओं के जाने पर प्रतिबंध रहा हो, पर अन्य

बहुत सारे शनि मंदिरों में प्रवेश को लेकर महिलाओं और पुरुषों में कोई फर्क नहीं किया जाता था, उसी तरह बहुत सारी दरगाहों में भी स्त्रियों के प्रवेश पर कोई पाबंदी नहीं है। जहां तक धार्मिक स्थान के प्रबंधन के अधिकार का प्रश्न है, बेशक संविधान से यह मान्य है। पर प्रबंधन के अधिकार का यह मतलब नहीं होता कि वह नागरिक अधिकार को बेदखल कर दे। इस तरह के प्रतिबंध उस जमाने की देन हैं जब सार्वजनिक जीवन अधिकांशत: परंपरा या रूढ़ियों से निर्धारित होता था। मगर अब समान नागरिक अधिकार और लैंगिक बराबरी व कानून के समक्ष समानता जैसे मूल्य सार्वजनिक जीवन के निर्धारक तत्त्व हैं। प्रबंधन के नाम पर इन मूल्यों को नकारा नहीं जा सकता।

आस्था के तर्क से धार्मिक स्थलों की एक स्वायत्तता हो सकती है, होनी भी चाहिए, पर इस हद तक नहीं कि वह किसी की धार्मिक आजादी को कुचलने वाली साबित हो, या नागरिकों के बीच भेदभाव का सबब बने। गौरतलब है कि प्रतिबंध हटाने का आदेश देते हुए अदालत ने अपने फैसले में कानून के समक्ष समानता, नागरिक आजादी और गरिमामय ढंग से जीने के अधिकार का भरोसा दिलाने वाले संवैधानिक अनुच्छेदों का हवाला दिया है। इस तरह देखें, तो शनि शिंगणापुर मामले की तरह यह फैसला भी यह सुनिश्चित करता है कि परंपरा के नाम पर बेजा पाबंदी के दिन लद गए हैं।

शनि शिंगणापुर मामले में अप्रैल में आए अदालत के फैसले के बाद हाजी अली दरगाह को लेकर भी पहले से चली आ रही मुहिम में तेजी आई। अच्छी बात है कि महाराष्ट्र सरकार ने दोनों मामलों में स्त्रियों के अधिकारों का पक्ष लिया। जरूरी नहीं कि तमाम धर्म और धार्मिक संस्थानों के नियम भारतीय संविधान की भावनाओं के अनुकूल हों। लेकिन धीरे-धीरे ही सही, दोनों के बीच तालमेल बनाना बहुत जरूरी है। विशेषत: नारी से जुड़े मसलों में भेदभाव को स्वीकार्य नहीं किया जाना चाहिए। समाज एवं देश में नारी के साथ बरते जा रहे भेदभाव को समाप्त करने के लिये अनेक व्यक्तियों ने संघर्ष किया, रूढ़ एवं अर्थहीन परम्पराओं की जड़े हिलाकर महिलाओं को धार्मिक-सांस्कृतिक परम्पराओं के धरातल को मजबूत रखकर युगीन परिवेश में प्रगति का वातावरण दिया।

स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द सरस्वती, राजा राममोहन राय ने कई धार्मिक रूढ़ियों को समाप्त करने में सफलता प्राप्त की। इस काम को संपादित करने के लिए उन्हें एक बड़े संघर्ष के दौर से गुजरना पड़ा था, पर वे रुके नहीं। आखिर उन्हें अपनी सोची हुई मंजिल मिली। किन्तु वे प्रथाएं और रूढ़ियां एक सीमा तक आज भी जीवित हैं। दयानंद सरस्वती ने महिलाओं को विकास के पथ पर अग्रसर करने के लिए शिक्षा का वातावरण बनाया, पर्दाप्रथा के विरोध में स्वर उठाया और जातिवाद की अवधारणाओं को समाप्त करने के लिए आंदोलन चलाया। लेकिन आज भी भारत के देहातों में ये सारी समस्याएं सिर उठाए खड़ी हैं। ईश्वरचंद विद्यासागर और महात्मा जोनिबा फुले ने धार्मिक मुद्दों के अतिरिक्त सामाजिक विषमता एवं नारी उत्पीड़न के कारणों को समाप्त करने का आह्वान किया। उनके स्वर वायुमंडल में गूंजते रहे और नारी समाज सामाजिक विषमता एवं उत्पीड़न के दंश सहता रहा। महात्मा गांधी ने अपने विचारों एवं कार्यक्रमों से नारी आंदोलन को तेज करने का लक्ष्य बनाया। उनके प्रयत्न से सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में अनेक महिला चेहरे अचानक उभरकर सामने आए, पर आम औरत की जिंदगी में कोई बहुत बड़ा परिवर्तन परिलक्षित नहीं हुआ।

महिला हो या पुरुष, सिर पर कोई धुन सवार हो जाए तो रास्ते ही मंजिल बन जाते हैं। जाकिया सोमन

और नूरजहां ने भी अपना लक्ष्य स्थिर किया और उसे हासिल करने के लिए मार्ग में उपस्थित चुनौतियों से मुकाबला भी किया। उन्होंने अपनी स्थिति को मजबूत बनाने के लिए बहुत कुछ सहन किया। इससे उन्हें मुक्त आकाश में उड़ाने भरने के लिए नए पंख अवश्य मिले, पर उनकी राह इतनी सरल नहीं रही। हवा के खिलाफ लड़ते-बढ़ते उनके कदम कहीं रूके, कहीं डगमगाए और कहीं अपने मकसद के निकट भी पहुंचे। कुल मिलाकर यह माना जा सकता है कि दोनों महिलाओं के संघर्ष ने आखिर जीत का सेहरा बांध लिया और आधी दुनिया को एक और सम्मानजनक जीत दिलाई है।

प्रेषकः-
(ललित गर्ग)
ई-253, सरस्वती कंुज अपार्टमेंट
25 आई॰ पी॰ एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली-92
फोनः 22727486, 9811051133